34.गीतिनाट्य की परिभाषा एवं तत्व

डॉ.शैलजा जायसवाल
अध्यक्ष हिन्दी विभाग, म.गां.विद्या मंदिर संचलित कला, विज्ञान व वाणिज्य,महाविद्यालय, मनमाड, नासिक.

कोई भी कला जब अपना एक महत्वपूर्ण स्थान बना लेती है और मान्यता प्राप्त कर लेती है, तब उसे परिभाषित किया जाता है। उसके सिद्धान्त बनाये जाते है। इसी प्रकार गीति–नाट्य का साहित्य की विधाओं में महत्वपूर्ण स्थान है। किन्तु गीतिनाट्य की जितनी भी परिभाषाएँ दी गयी है वे अधूरी है या एकांगी है। कुछ पाश्चात्य विद्वानों ने गीति–नाट्य की महत्वपूर्ण परिभाषाएँ दी है। कुछ समीक्षकों ने गीति–नाट्य के सम्बन्ध में तो विस्तार से वर्णन किया है, किन्तु वे गीतिनाट्य की परिभाषा नही दे सके। अथवा उन्होंने परिभाषा देना आवश्यक नही समझा।

गीति–नाट्य की परिभाषाएँ : 1) उदयशंकर भट्ट के अनुसार : "गीतिनाट्य रूपक का ही एक भेद है, जिसका प्राणतत्व है, भावना अथवा मन का संघर्ष और माध्यम है– कविता।" **2) डॉ. नगेंद्र के अनुसार :** "कविताबद्ध नाटकों को इतिहास में गीति–नाट्य की संज्ञा दी गई है। इन नाटकों में मानव के हृदय में संचारी भाव का अभिव्यक्तिकरण होता है। क्रिया इनमें है, पर सामान्य नाटकों की भाँति नही इनमें क्रिया मानसिक है। इसी से भावों का उत्थान–पतन होता है। जहाँ गीति पद्य में स्वरस भावों का संचालन होता है उसे गीति–नाट्य कहते है।" **3) शिवनन्दन प्रसाद के अनुसार :** "काव्य की पारंपरिक विविध विधाओं (गीत, महाकाव्य, नाटक) के विशेषीकृत स्वरूपों को एकीकृत संरचनाओं में काव्य दृश्य को प्रस्तुत करने वाला काव्य विधा को गीति–नाट्य कहते है।" **4) शकुन्तला दूबे के अनुसार :** "शकुन्तला दूबे ने अपेक्षाकृत गीतिनाट्य की सुन्दर परिभाषा की है उनके अनुसार– अ) गीति–नाट्य ऐसा काव्य रूप है सिकी मूल भावना एवं शैली आत्माभिव्यंजक होती है, और नाटकीय कथोपकथन के आधार पर पात्रों की भावाभिव्यंजना एवं कथा सूत्र को आगे बढ़ाया जाता है। ब) जब कवि दृश्य काव्य का सहारा लेकर गीतात्मक रूप में अपनी अनुभूति को संजोता है, तब उस बाह्य अभिव्यंजना को गीति–नाट्य की संज्ञा दी जाती है। क) गीति–नाट्य उस रचना को कहते है, जिसमें नाटकीय कथोपकथनात्मक शैली में अन्यान्य पात्रों के माध्यम दवारा कवि हृदय की रामात्मक भावना बहुमुखी होकर अभिव्यंजित होती है। दृश्य काव्य की भाँति बीच–बीच में गीतों की योजना होती है और नाटकीय दृश्य विधान उसमें होता है, वहाँ दूसरी ओर गीता और भावप्रधानता उसमें विशिष्ट गुण है। **5) रामचरण महेन्द्र अनुसार :** "गीति–नाट्य पात्रों के मन के उद्वेगों और उच्छवासों की नाटकीय अभिव्यक्ति है जिसमे गेय तत्व है, अनुभूति और संगती की प्रधानता होती है। इसमें संगीत रहता है पर गीतिनाट्य केवी संगीत भर नही है। गीति–नाट्य में जहाँ ताल–स्वर पर संगीत थिरकता है वहाँ अभिनय कला और नाटकीयता स्वर में स्वर मिलाकर नृत्य करती है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि, गीति–नाट्य में निम्नलिखित लक्षण स्वीकार किए जा सकते है। 1) गीतिनाट्य का प्रधान एवं महत्वपूर्ण लक्षण उसका पद्यबद्ध होता है। वह सर्वधा पद्यमय होता है और बिना पद्यमयता के गीतिनाट्य के अस्तित्व को स्वीकार नही किया जा सकता। 2) गीति–नाट्य का कथानक भावप्रधान होता है और उसमें आंतरिक संघर्ष (अंतद्वन्द) की प्रधानता होती है। यह गीतिनाट्य का दूसरा प्रधान लक्षण है। बिना अन्तः संघर्ष के भी गीतिनाट्य के अस्तित्व को स्वीकार नही किया जा सकता है। 3) गीति–नाट्य का तीसरा प्रधान लक्षण शिल्प सम्बधित है। गीतिनाट्य का कथानक, नाटक के समान ही कथोपकथनात्मक शैली में आगे बढ़ता है। कवि या लेखक को स्वयं अपनी ओर से कुछ भी कहने का अवसर नही होता। 4) गीति–नाट्य नाट्य में दृश्य काव्य और गीति काव्य दोनों की विशेषतः का समन्वय होता है। अतः इसे मिश्र विधा कहा जा सकता है। यह लक्षण दो काव्यों विशषेताओं के समन्वय का सूचक है।

उपर्युक्त परिभाषाओं और लक्षणों के आधार पर गीतिनाट्य की परिभाषा इस प्रकार होनी चाहिए। गीति–नाट्य वह मिश्र विधा है जो अनिवार्यतः पद्यबद्ध होता है और जिसमें गीतिकाव्य की आत्माभिव्यंजना, भावप्रवणता, गीतिनाट्य की मानसिक संवेदना, अन्तर्द्वन्द और कवि की रसात्मक अनुभूति का साथ, नाटकीय दृश्य विधान, अभिनेयत्व, रंगनिर्देश और कथोपकथनात्मक शैली में मानसिक व्यापार का सहयोग होता है।

गीतिनाट्य की विशेषताएँ :विषय और शिल्प के आधार पर गीतिनाट् की विशताओं को दो भागों में विभिक्त किया जा सकता है। 1) वस्तुगत विशेषताएँ 2) शैलीगत विशेषताएँ